Aayushi International Interdisciplinary Research Journal (AIIRJ)
UGC Approved Sr.No.64259
Vol - V Issue-IV APRIL 2018 ISSN 2349-638x Impact Factor 4.574

महिला कथा साहित्य में चित्रित दरकतेदाम्पत्य संबंध

डॉ. संदीप रणभिरकर
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
बान्दरसिंदरी, किशनगढ – 305801 जिला–अजमेर (राजस्थान)

दाम्पत्य सम्बन्ध परिवार की नींव हैं। गृहस्थी रुपी रथ के दोनों पहिए सुचारू रूप से संचालित होकर जीवन रुपी पथ पर चलते हैं तो सुख रूपी उद्दिष्ट स्थल तक बिना बाधा पहुँच सकते हैं। परन्तु मानव जीवन निश्चित परिपाटी पर चल नहीं सकता, परिवर्तित परिस्थितियों का प्रभाव व्यक्ति के जीवन पर पडता है। बदलती हुई परिस्थितियों में व्यक्ति स्वयं बदलता है और उसका प्रभाव पारिवारिक संबंधों पर पडता है जिससे पारिवारिक सम्बन्ध परिवर्तित होते हैं। स्वातंत्र्योत्तर काल में नई स्थितियां उत्पन्न हुईं जिससे स्त्री–पुरुष सम्बन्ध प्रभावित हुए। स्त्री शिक्षा, स्त्री स्वातंत्र्य, स्त्री–पुरुष समानता, स्त्रियों का अर्थ स्वावलंबन, पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण आदि स्थितियों के परिणामस्वरूप पति–पत्नी सम्बन्ध प्रभावित हुए हैं।

जिस प्रकार परम्परागत मूल्यों का विघटन हो रहा है, संयुक्त परिवार की संख्या टूट रही है, उसी प्रकार स्त्री–पुरुष संबंधों म भी परिवर्तन आ रहा है। दिन–ब–दिन उनके संबंधों में तनाव पैदा हो रहा है। पारिवारिक मूल्यों की संक्रांति अवस्था में गुजरता हुआ भारतीय परिवार स्त्री–पुरुष के आपसी तनाव को बडो द्रुतगति से महसूस कर रहा है। इसका एक अनिवार्य परिणाम यह हुआ है कि हमारे समाज की वह आदर्श नारी (जिसका पति जिसके लिए सबकुछ होता था, जिसकी वह सच्चे मानों में पत्नी होती थी), अब वह परम्परागत धारणाओं से ऊपर उठ चुकी है। पति और पत्नी के रिश्तों में आमूलाग्र परिवर्तन उपस्थित हुए हैं। उनमें दूरियाँ बढती ही जा रही हैं। इन दूरियों के अनेक कारण हैं, जैसे पति–पत्नी का अहं भाव, अति महत्वाकांक्षा, तीसरे व्यक्ति का प्रवेश, घुटन, ऊब, असंतोष आदि। फलतः एक दूसरे के बीच मनमुटाव, अकेलापन और उलझन उत्पन्न हो जाती है। वे एक दूसरे को अपने साथ व्यवस्थित नहीं कर पाते हैं। महिला कथाकारों ने इन दाम्पत्यगत दरियों को स्वीकृति प्रदान करते हुए अपने कथा साहित्य में इन स्थितियों का यथार्थ अंकन किया है।

हर मनुष्य स्वतंत्रता का आकांक्षी होता है। वह सोचने समझने, निर्णय लेने, रहन–सहन, कार्य करने में स्वतंत्रता चाहता है यदि किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसकी इस स्वतंत्रता का हनन होता ह तो उसके मन में असंतोष निर्माण होता है और रिश्ते में दरार पड जाती है। उषा प्रियंवदा की 'जाले' कहानी में राजेश्वर और कौमुदी के दो से एक होने और फिर एक से दो होने की स्थिति को उजागर किया गया है। इसमें चिरकाल तक दो व्यक्तियों का अविवाहित रहना किस तरह इन्हें विवाहित जीवन के लिए अयोग्य बना डालता है इसका चित्रण किया गया है। विवाह से पूर्व राजेश्वर और कौमुदी अपने–अपने एकांत में स्वतंत्र, संतुष्ट और सुखी थे। प्रेम और विवाह के जंजाल में पडकर अपनी स्वतंत्रता को वे खोना नहीं चाहते थे। परन्तु एक–दूसरे से परिचित होने के बाद दोनों में सहज भाव जागता है और दोनों विवाह कर लेते हैं। विवाह एक ऐसी व्यवस्था है, जहां दोनों एक–दूसरे को स्वतंत्रता देते हुए भी एक–दूसरे पर नियंत्रण रखना चाहते हैं। राजेश्वर इस बात को समझ नहीं सकता। उसे लगता है कि कौमुदी का व्यक्तित्व उसे लीलता जा रहा है और उसने सारे घर को पूरी तरह बदल दिया है। वह अनुभव करने लगता है कि उसकी मेज, कुर्सी, किताबें उससे छिन गई हैं, और इस तरह उसके शरीर के अंग काट दिए गए हैं। अपने पुराने जीवन को फिर से जीने के लिए वह छटपटाने लगता है – "उनको लगता है कि वह मकडो के जाले में घिर कर रह गए हैं। जिसके तार दूर से बहुत सुकुमार और बहुत आकर्षक लगते हैं, पर एक बार उसमें फँस जाने के बाद निष्कृति की कोई आशा नहीं रहती ।"[1] इस तरह उषा प्रियंवदा ने पति–पत्नी में उत्पन्न दुराव को चित्रित करते हुए विवाहित जीवन को नयो दृष्टि से आंकने का यत्न किया है और स्त्री–पुरुष के अनमेल को नए संदर्भ में चित्रित किया है।

नासिरा शर्मा ने 'शाल्मली' में उच्चपदस्थ अफसर शाल्मली के दाम्पत्य संबंधों के तनाव की कथा प्रस्तुत करते हुए आज आधुनिक युग में भी पुरुषप्रधान समाज व्यवस्था का नारी की ओर देखने का दृष्टिकोण किस प्रकार है, यह स्पष्ट किया है। नरेश सरकारी अधिकारी है लेकिन वह तथाकथित पुरुषप्रधान समाज के अहं से युक्त पुरुष है। औरतों की ओर देखने का उसका दृष्टिकोण अत्यधिक हीन है। अपने अन्दर वह निरंतर एक स्वामित्व की भावना लेकर जीवन व्यतीत करता है। उसकी नजर में औरतों को मात्र विवाह तक पढना चाहिए।

पति के साथ बहस करती औरतें उसे अच्छी नहीं लगती। आगे उसके मन में पत्नी की उच्च पदस्थता के प्रति ईर्ष्या भाव निर्माण होता है। फलस्वरूप उसमें पत्नी को नीचा दिखाने का भाव जाग्रत होता है पूरे उपन्यास में वह विभिन्न तरह से शाल्मली को पीडा पहुंचा कर आहत करता रहता है।

विवाह के कुछ दिनों के पश्चात ही शाल्मली को उनके दाम्पत्य संबंधों में दरार नजर आती है। नरेश परोक्ष रूप में अपने आप को श्रेष्ठ साबित करने की कोशिश करता रहता है। यह श्रेष्ठता मात्र एक ही बात साबित करना चाहती है कि वह पति है और शाल्मली पत्नी। "विवाह के कुछ दिनों बाद से ही उसे लगने लगा कि उनके बीच कुछ टूटा था, जिससे एक ही ध्वनि गूंजी थी कि नरेश पति है औत वह पत्नी। स्वामी और दासी का यह सम्बन्ध एक काली छाया बन उसके और नरेश के बीच एक मजबूत दीवार का रूप धारण करने लगी थी।"[2] इन दोनों के बीच की यह दीवार शाल्मली के ट्रेनिंग के काल में और अधिक बढती है। नरेश शाल्मली के चुनाव से आरम्भ में खुश तो हो जाता है लेकिन जब उसके घर न रहने से उसकी सभी जरूरतों की पूर्तता न होने के कारण वह शाल्मली को सब छोडकर घर बैठने के लिए समझाने लगता है। हर पुरुष के समान वह आरम्भ में प्यार के जाल में फंसाकर शाल्मली को घर बैठने की सलाह देता है। "तुम घर में रहकर गृहस्थी और मुझे संभालो। इतना हाथ बटाओ मेरा, फिर देखो मैं आकाश का पूरा सौर्य मंडल तुम्हारे चरणों पर रख दूंगा।"[3] शाल्मली इस बात के लिए असमर्थता प्रकट करती है, तो पति के अन्दर छिपे अहं को चोट पहुंचती है। उसका यह विनम्र निवेदन आगे उग्र रूप धारण कर लेता है। विवाह करने के कारण इस अनुभव का सामना करना पड रहा है, यह सोचकर शाल्मली को अपने विवाह के निर्णय पर पछतावा होने लगता है। नरेश का वहशीपन, दुर्व्यवहार, सस्ते विचार, अपमान से शाल्मली का मन पीडित हो उठता है ।

प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता' नारी यातना, विद्रोह तथा मुक्ति को प्रस्तुत करने वाला उपन्यास है। उपन्यास की नायिका प्रिया विसंगत परिस्थितियों में भी छिन्नमस्ता बनकर अपना मार्ग स्वयं चुनती है। प्रिया बाईस वर्ष की आयु में करोडपति अग्रवाल घराने की बहू बन जाती है। प्रिया को अपेक्षा से अच्छा ससुराल प्राप्त होता है। लेकिन शादी के दूसरे ही दिन उसके पति के संदर्भ में जो स्वप्न थे, वे सभी टूट जाते हैं। उसे यह समझ में आ जाता है कि उसका पति एक वहशी जानवर से अधिक कुछ भी नहीं है। शादी के बाद अपने जीवन की पिछली बातें नरेन्द्र को बताकर एक ईमानदार पत्नी बनना चाहती है। लेकिन नरेन्द्र को मात्र अपनी इच्छापूर्ती के अलावा कोई बात दिखाई नहीं देती। प्रिया मात्र अपने मन में सोचती रह जाती है, "नरेन्द्र मैं कुँआरी नहीं... मैं पहले ही टूट चुकी हूँ। हर पुरुष ने मुझे चोट मारी है, आहत किया है। मेरा घायल मन। नरेन्द्र हम जीवन साथी हैं... मैं तुमसे सबकुछ कह देना चाहती हूँ... एक पूरी बेबाक ईमानदारी के साथ।"[4] नरेन्द्र की नजर में प्रिया मात्र एक साधन है। सज–धज कर, उसकी इच्छा के अनुरूप कपडे पहनकर, गहने पहनकर तथा बाल संवारकर उसके साथ पार्टियों में जानेवाली मात्र एक गुडिया। इस बनावटी जीवन से प्रिया ऊब जाती है।

विवाह के डेढसाल पश्चात संजू के जन्म के बाद प्रिया एवं नरेन्द्र के रिश्ते में दरारें निर्माण होने लगती हैं। प्रिया को नरेन्द्र के व्यवहार से नफरत सी होने लगती है। नरेन्द्र का वहशी व्यवहार, पापा के प्रति नफरत का भाव, हर छः महीने को सेक्रेटरी बदलने की उसकी आदत, स्त्री के प्रति अनादर का भाव, बडो–बडो पार्टियों का आयोजन तथा अपनी अमीरी का प्रदर्शन करने की उसकी आदत आदि कई बातें प्रिया को नरेन्द्र से दूर ले जाती हैं। इस बीच नरेन्द्र के पापा की मृत्यु तो उसके लिए पूरा मैदान खाली कर देती है। प्रिया स्वयं सोचती है, "पापा के जाने के बाद घर और वीरान हो गया था और इधर नरेन्द्र कुछ और तगडा। पहले पापा का डर, लिहाज कुछ तो था मगर अब घर का अकेला कर्ता–धर्ता पूरी हुकूमत उसके हाथ में । शादी के पांच साल पूरे हो गए थे पर हमारे सम्बन्ध चटकने लगे थे।खरोंच तो पहले ही लग चुकी थी। क्या सुहागरात के दिन... या फिर हनीमून के दौरान... नहीं, शायद संजू के होने के बाद । याद नहीं आता, कुछ न कुछ तो रोज घटता ही रहता था... जो हमें एक–दूसरे से दूर फेंकता चला जा रहा था।"[5] अपने इस जीवन से कुछ क्षण अलग बिताने के लिए प्रिय नरेन्द्र की इच्छा से ही एक छोटा व्यापार आरम्भ करती है, जिसके परिणामस्वरूप उसे आगे अपने अन्दर छिपी शक्ति का एहसास होता है। प्रिया को व्यापार में आगे बढता देखकर नरेन्द्र कई बार हिंसक हो उठता है। अपनी गलती पर पछतावा करके प्रिया को प्रताडित करना उसका रोज का कार्य बन जाता है। नरेन्द्र और प्रिया के सम्बन्ध इतने बिगडजाते हैं कि नरेन्द्र उसे घर से बाहर निकाल देता है। उससे उसके बच्चे छीन लेना, रिजर्व बैंक को खत लिखकर व्यापार बंद करवाने की धमकी देना आदि कई बातें घटित होती हैं, जिनका दर्द अपने अन्दर लेकर प्रिया जब भी पीछे मडकर देखती है, तब उसे इन मृत संबंधों को ढोने की अपेक्षा तोडना ही अच्छा लगता है।

मृदुला गर्ग द्वारा लिखित उपन्यास 'चितकोबरा' की नायिका मन विविध भावनात्मक स्थितियों से गुजरती है। मनु के माध्यम से यहाँ जीवन का एक नवीन पक्ष उद्घाटित हुआ है। सुशिक्षित एवं सभ्य समाज की मनु मानसिक संघर्ष की शिकार है। साथ ही वैवाहिक जीवन की असंतुष्टि और अपने सच्चे प्रेम का त्याग उसकी प्रमुख पीडा है। मनु एक विद्रोहो एवं मुक्त विचारों की नारी होने के बावजूद पति और प्रेमी में से किसी एक के चुनाव में झूलती दिखाई देती है। सामाजिक बंधनों का पालन करने वाली मनु विवाह के तुरंत बाद अपने पति के लिए हर वह काम करती है, जो एक आदर्श पत्नी अपने पति के लिए करती है। अल्पावधि मे ही वे दोनों शहर के आदर्श पति–पत्नी के रूप में पहचाने जाते हैं। मनु ने कभी भी यह नहीं सोचा कि महेश उससे प्रेम करता है या नहीं। "डर के मारे कभी उससे पूछा नहीं था, वह मुझे प्यार करता है या नहीं। कहीं उसने साफ–साफ कह दिया – नहीं। सच कहता है महेश। मैं चपचाप उसे वह सब देने में जुट गयी थी, जो मेरे ख्याल से एक औसत पति, पत्नी से चाह सकता था। सुन्दर–सुचारू, घर–गृहस्थी, साफ–स्वस्थ बच्चे, सजी–संवरी–सुघडपत्नी। दोस्तों की भरपूर खातिरदारी, सामाजिक मेल–मिलाप। बहुत जल्दी हम दोनों गोरखपुर के उस छोटे शहर में आदर्श दम्पति की तरह मशहूर हो गए थे।"[6] मनु को यह बात अच्छी तरह से पता है कि महेश विवाह के बंधन में विश्वास नहीं रखता। लेकिन विवाह एवं प्रेम में मनु का दृढविशवास है। परिणामस्वरूप वह महेश से असंतुष्ट रहने लगती है। प्रेम की कमी पूरी करने के लिए वह रिचर्ड नामक पादरी की ओर बढती है। रिचर्ड विवाहित है और मनु से गहरा प्रेम करता है। मनुष्य जब जीवन में अपनों से प्रेम प्राप्त नहीं करता है, तब बाहर जाकर प्रेम को ढूँढता है। मनु के चरित्र में भी यह बात दिखाई देती है। महेश द्वारा प्राप्त उपेक्षा के कारण वह रिचर्ड में अपने प्रेम को ढूढती है और प्राप्त करने में सफल भी हो जाती है।

इस उपन्यास में विवाहेतर प्रेम एवं काम–संबंधों को प्रकट कर लेखिका ने अपने पात्रों के जीवन दर्शन को संपूर्ण कौशल के साथ प्रस्तुत किया है। पति के पीछे मनु अपने विदेशी प्रेमी रिचर्ड के साथ नित्य दोपहर का समय केवल अपने 'स्व' को तुष्ट करने के लिए व्यतीत करती है। अपने इस आचरण पर उसे कोई अपराध बोध नहीं है। हाँ, यह सही है कि आगे चुनाव की स्थिति में दोहरी मानसिकता में झूलती है, लेकिन उससे निकलने का रास्ता भी प्राप्त करती है। मनु के माध्यम से लेखिका ने नारी जीवन के नवीन मूल्यों को अंकित किया है।

'गलत नंबर का जूता' नमिता सिंह की विचारशील कहानी है। विचार, भावना और मूल्यों के प्रति समान आस्था हो तो पति–पत्नी का जीवन सुखी होता है और जीवन में समरसता छाती है। रिश्तों का आधार ही जीवन विषयक दृष्टि की समानता होता है अगर ऐसा न हो तो सम्बन्ध बेमेल होने लगते हैं। ऐसी ही स्थिति सुधीश और सुजाता की होती है। जीवन के प्रति उन दोनों का दृष्टिकोण अलग–अलग है। मध्यवर्गीय रिश्तों की विसंगति का चित्रण इसमें किया गया है। सुधीश इंजीनियर है, उसके लिए प्रगति और पैसा बहुत मायने रखते हैं। इनकी प्राप्ति के लिए वह कुछ भी करने को तैयार है। सुजाता को संपत्ति से अधिक नीति–मूल्य महत्वपूर्ण लगते हैं। अनैतिक और गलत मार्ग से आनेवाली धन–संपदा उसे नहीं चाहिए। पति–पत्नी के बीच समीकरण सही नहीं बैठता था। सुजाता को लगता है – "उसकी बात सुधीश नहीं समझ पाता है और सुधीश का तरीका उसकी समझ से बाहर है – अलग–अलग खाँचे एक–दूसरे में फिट नहीं बैठते।"[7] सुधीश और सुजाता का बाहर से अच्छा और समृद्ध दिखाई देने वाला घर भीतर से कहीं उलट–पुलट गया था। सुजाता पति के व्यवहार से, उसके सोच–विचार से परेशान होती है। पति की जबरदस्ती से उसके स्वाभिमान को चोट लगती है। सुधीश दिन–ब–दिन सुजाता को नौकरी करने का आग्रह करता है। सुजाता पति को बताना चाहती है – "हाँ मैं नौकरी करुँगी, अपने पैरों पर खड होने के लिए। मैं खुद को इस लायक बनाउंगी।"[8] वह नौकरी अपने 'स्व' की पहचान बनाने के लिए करना चाहती है। वह पति को नौकरी करने का उद्देश्य स्पष्ट करना चाहती है – "मैं नौकरी करुँगी – लेकिन तुम्हारी महत्वाकांक्षा के रास्ते पुख्ता करने के लिए नहीं बल्कि अपने पैरों को मजबूत बनाने के लिए।"[9] वह अपने व्यक्तित्व को तथा निजी अस्तित्व को प्रस्थापित करना चाहती है।

घरेलु नौकर पैरों में अपनी नाप से बड जूते पहनकर आता था, इसलिए उसे सावधानी से चलना पडता था। नौकर का 'गलत नंबर का जूता' पहनना आज उसे असह्य होता है, वह उसे पैसे देते हुए कहती है – "कल से वह बड जूते पहनकर मत आना – दूसरे जूते लाओ, अपनी नाप के।"[10] नौकर को गलत नंबर के जूते से अलग करके सुजाता राहत पाती है। गलत जूते में व्यक्ति सही सहज गति से चल नहीं सकता और अच्छा भी नहीं दिखता। "गलत नंबर का जूता लाख खूबसूरत हो, कभी आरामदेह नहीं हो सकता ।"[11] ऐसे समय जूता बदलना एकमात्र विकल्प होता है। उसी प्रकार पति–पत्नी के बीच में वैचारिक और भावात्मक समानता न हो तो जीवन का प्रत्येक क्षण काटने लगता है। आपसी रिश्ते बोझबनने लगते हैं, ऐसे समय संबंधों को तोडना

आवश्यक और उचित होता है। 'गलत नंबर का जूता' गलत रिश्ते का प्रतीक है। सुधोश और सुजाता की जोडो गलत नंबर के जूते में फँसे पाँव की तरह है, जिसमे चुभन और पीडा है। सुजाता ने कुछ समय तक तो पीडा सहन की परन्तु अब वह जूते को बदलने का निर्णय लेती है, सही नंबर को तलाशना चाहती है। उसका पति उसके लिए गलत नंबर का जूता ही है। इसीलिए वह स्वावलंबी बनने के लिए नौकरी करना चाहती है। वह अपने पति से अलग होकर अपनी अस्मिता और अपने मूल्यों को बचा लेना चाहती है। सुजाता का यह निर्णय एक वैचारिक विद्रोह है, जो पति परमेश्वर वाली धारणा को तोडता है।

'भया कबीर उदास' में उषा प्रियंवदा ने यह स्पष्ट कर दिया है कि पति–पत्नी का रिश्ता आज शरीर तक ही सीमित रह गया है। पति और पत्नी को परस्पर शरीर का ही आकर्षण है, किन्तु उन्होंने यह भुला दिया है कि यह रिश्ता शरीर से परे भी है। इसे केवल शरीर तक सीमित करना हमारी स्वार्थी एवं संकुचित दृष्टि का परिचायक है। शषेन्द्र और ज्योति का सम्बन्ध ऐसा ही है। जब तक ज्योति ठीक थी, सब ठीक था। जैसे ही उसे कैंसर हो जाता है शेषेन्द्र अपने को उससे अलग कर लेता है। वह कहता भी है कि "मैं उन्हें वैसा सहारा या आश्वासन न दे पाया जो एक पत्नी अपने पति से अपेक्षा कराती है। मैं उनसे बहुत दूर–दूर चला गया। ...और जब तक वह पूर्ण रूप से स्वस्थ हुईं, हमारे सम्बन्ध एकदम टूट चुके थे, टूट चुके हैं। मुझे यह कहने में बहुत शर्म महसूस होती है कि मैंने उसके बाद ज्योति को निरावरण देखना ही नहीं चाहा।"[12] बीमारी में जब एक पत्नी को सबसे ज्यादा जरुरत अपने पति की होती है, शेषेन्द्र उससे पीछा छुडाकर भागता रहा। कोमल और संवेदनशील शेषेन्द्र कैंसर के बाद अपनी पत्नी से पूरी तरह विमुख हो गया है – "मैं एक तल पर रहता हूँ, वह दूसरे तल पर कई–कई दिन मुलाकात नहीं होती द्य"[13] पत्नी भी पति से ऊब चुकी है, उसे भी अपने पति में अब कोई रूचि नहीं है।

अपर्णा–अपूर्व के माध्यम से लेखिका ने वर्तमान परिवेश के दरकते स्नेहहीन संबंध पर प्रकाश डाला है। ज्योति के समान अपर्णा भी कैंसर से ग्रस्त है। पत्नी इस भयावह बिमारी की पीडा झेल रही है, किन्तु पति पर इसका कोई प्रभाव नहीं है, वह अपनी दिनचर्या में व्यस्त है। उसके चहरे पर चिंता की कोई लकीर नहीं है। लिली को उसका ये रवैया देखकर ताज्जुब होता है। "लिली चाहती थी कि कभी तो अपूर्व कोई चिंता, कोई दुःख, कोई घाटे के भाव प्रदर्शन करे, पर अपूर्व था कि उसने सबकुछ घूँट लिया था।"[14] अपर्णा जब अंतिम साँसे गिन रही थी, तब भी उसकी आँखें रीती ही थीं। रिश्तों की क्षणभंगुरता का पता तो तब चलता है, जब अपर्णा की मृत्यु का अनुष्ठान पूरा करने भारत गया हुआ अपूर्व साथ में एक नई पत्नी लेकर आ जाता है – "परन्तु अपूर्व ने तो जरा भी सब्र नहीं किया? अपर्णा की मृत्यु का अनुष्ठान करने भारत गया तो उसके साथ लौटी दुबली, पतली गोरी–सी पत्नी।"[15] तब अनायास यह अहसास होता है कि समय ने अपर्णा के अस्तित्व को ही मिटा दिया। सचमुच, कितनी क्षणभंगुर होती है जिंदगी और कितनी जल्दी लोग भूल जाते हैं।[16]

समग्रतः विभिन्न कारणों से पति–पत्नी सम्बन्ध चरमरा रहे हैं। इन कारणों की सूक्ष्म पडताल करते हुए महिला कथाकारों ने दाम्पत्य संबंधों को सुरक्षित रखने के उपाय भी बताए हैं। उनके मतानुसार दाम्पत्य संबंधों को तोडने वाले घटक व्यक्ति निर्मित हैं इसीलिए हर व्यक्ति को अर्थात पति या पत्नी को विघटित करने वाले घटकों को दूर करना चाहिए। दोनों में समझौता या सामंजस्य स्थापित हो जाने से दाम्पत्य संबंधों में मधुरता स्थापित होती है। पति–पत्नी में स्नेह, समझदारी, त्याग, विश्वास, औदार्य आदि गुणों के रहने से विषमतापूर्ण स्थितियां दूर हो जाती हैं तथा पुनः दाम्पत्य जीवन सुखमय बन जाता है।

संदर्भ सूची :

1. उषा प्रियंवदा, जिंदगी और गुलाब के फूल, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, सं. 2004, पृ. 38
2. नासिरा शर्मा, शाल्मली, किताब घर, नई दिल्ली, सं. 1997, पृ. 10
3. वही, पृ. 44
4. प्रभा खतान, छिन्नमस्ता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1993, पृ. 70
5. वही, पृ. 151
6. मृदुला गर्ग, चितकोबरा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, सं. 1979, पृ. 88–99
7. नमिता सिंह, जंगल गाथा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1992, पृ. 115
8. वही, पृ. 123
9. वही, पृ. 123

10. वही, पृ. 124
11. वही, पृ. 124
12. उषा प्रियंवदा, भया कबीर उदास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2007, पृ. 59
13. वही, पृ. 116
14. वही, पृ. 54
15. वही, पृ. 87
16. वही, पृ. 88

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com